हरियाणवी लोक संगीत की उत्कृष्टता

– डॉ. परमजीत कौर

विभागाध्यक्ष, संगीत

सनातन धर्म कॉलेज, अम्बाला छावनी।

हरियाणा अंचल अपनी भौगोलिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा आर्थिक विशिष्टता के लिए भारत का एक प्रमुख अंग ही नहीं अपितु लोक संस्कृति तथा लोक संगीत में भी अद्वितीय है। यहां का लोक संगीत – लोक गीतों, लोक–कथाओं, लोक नाट्य–सांग तथा लोक नृत्यों में भरपूर झलकता है। हरियाणवी लोक गीतों का ''सबसे बड़ा रहस्य यह है कि इनमें जीने की चाह तूफानी सागर की गरजती उछलती तरंगों की तरह आसमान को छूने के लिए बेचैन रहती है। सामाजिक आदान–प्रदान के जीवट यहां मशाल की तरह रोशन है। इस दृष्टि से लोक चेतना के समष्टि–व्यष्टि रूपों की इतनी विविध, इतनी आकर्षक और निश्छल अभिव्यक्ति जो मानव मन की गांठ को मोम की तरह पिघलाकर उसके अन्तःकरण को परिष्कृत करने वाली है। इन लोकगीतों की मधुर ज्योत्सना में ये स्वतः मुस्कुरा उठती है। दरअसल ये गीत प्राकृतिक उल्लास, हृदय की सरसता और सामुदायिक जीवन, संगीत की झंकार से गूंज रहे हैं।''1 यहां की धरती का शृंगार भी संगीत से हुआ है। इसका अनुमान यहां के अनेक गांवों का नाम शास्त्रीय संगीत के रागों पर आधारित होने से लगाया जा सकता है। ज़िला चरखी दादरी में नंदयम, सारंगपुर, बिलावल, वृन्दावन, तोड़ी, आसावरी, जैश्री, मालकोशाना, हिण्डोला, भैरवी, गोपी कल्याण तथा ज़िला जींद में जय–जयवन्ती तथा मालवी आदि। गांवों का नाम रागों पर रखने की वजह उस समय के शासक का संगीत अनुरागी होना था या कुछ और विचारणीय विषय हो सकता है परन्तु इतना तय है कि यहां के लोग अपनी तरल तथा स्निग्ध भावनाओं को प्रकट करने के लिए संगीत को एक महत्त्वपूर्ण माध्यम मानते रहे हैं।

हरियाणवी लोकगीतों के गायन में संगत के रूप में मुख्यतः दो प्रकार के वाद्यों का प्रयोग होता है – स्वरोत्पत्ति तथा ताल व लय उत्पत्ति।

लोकगीतों में शब्दों की बहुलता रहती है इसलिए स्वर उत्पन्न करने वाले वाद्यों की संख्या अधिक नहीं होती।

जो वाद्य स्वर देने वाले हैं उनमें एकतारा तथा सारंगी (तत् वाद्य), बांसुरी तथा बीन (सुषिर वाद्य) अकसर प्रयोग किए जाते हैं। हारमोनियम का प्रचार आधुनिक लोक गायकों में बढ़ गया है। ताल वाद्यों में – ढोलक, ढोल, नगाड़ा, डफली, ताशा (अवनद्ध वाद्य) तथा खड़ताल, घड़ा, मंजीरा, झॉझ व घुँघरू (घन वाद्य) का प्रयोग बहुतायत में होता है क्योंकि लोक संगीत का मुख्य आधार ताल तथा लय है। तालों में मुख्यतः तीन ताल रूपक, दादरा तथा कहरवा का प्रयोग होता है और रागों में बिलावल, पीलू, काफी, भोपाली, भैरवी, चन्द्रकौंस तथा देस इत्यादि। लोकगीतों में तीन, चार या पांच स्वर ही प्रयुक्त होते हैं या इससे अधिक भी हो सकते हैं। लोकधुनें सरल होती हैं परन्तु इनमें खटके, मुर्की इत्यादि से इनको और शृंगारित किया जाता है। धुनों की विशेषता है कि इनमें जल्दी–से कोई परिवर्तन नहीं होता जैसे लोकगीतों में अकसर देखने को मिलता है। हरियाणवी लोकवाद्यों का स्वतंत्र वादन सरकार द्वारा कराये जाने वाले विरासती उत्सवों तथा महाविद्यालय व विश्वविद्यालय स्तर पर होने वाले युवा महोत्सवों में एकल तथा समूह (आरकेस्ट्रा) के रूप में सुना जा सकता है।

हरियाणवी लोकगीतों का सर्वोत्तम गुण इनमें व्याप्त काव्यात्मकता है, जिससे लोकगीतों की संरचना में माधुर्य उत्पन्न होता है। हरियाणा की रोड़ जाति अंगूठे को गूठा, मटकता को मटकदा, लेना को लेंदा तथा रोती सुबकती को रोंदी सुबकदी उच्चारण करती है। इसी प्रकार जनपद में राजस्थानी, कहीं अहीरवनी, कहीं बृज तो कहीं बांगरू उपबोलियों से हरियाणवी भाषा में सहज सरलता का भाव उत्पन्न होता है, जो लोकगायकों को नए गीत सृजन करने में सहायक है।

हरियाणा का लोक–संगीत विस्तृत स्तर पर लोक गाथा के रूप में लैला मजनूं, नल–दमयन्ती, हीर–रांझा, पदमावति–रतनसेन, ढोला–मारू, आलह–ऊदल, मधवानल– कामकंदला में विद्यमान रहता है। लोकगीतों के साथ जो नृत्य प्रसिद्ध है उनमें धमाल, लूर, झूमर, गणगोर इत्यादि हैं। हरियाणा के लोग संगीत को जिस विधा ने अपनी मौलिकता तथा विविधता दिलवाई है वह उसके संस्कारिक, रस, ऋतुओं, जाति तथा श्रम पर आधारित गीत नहीं है बल्कि स्त्री के जीवन तथा परम्परा की रूढ़ियों में बंधे जकड़ी गीत तथा हास–परिहास, धर्म–कर्म का गीत रागिनी है जहां सम्पूर्ण

हरियाणवी जीवन की झांकी सांग द्वारा प्रतिवादित होती है।

जकड़ी :– यह हरियाणवी लोकगीतों की एक ऐसी परम्परा है जो भारत के अन्य प्रदेशों के लोकगीतों से भिन्न तथा विशिष्ट है। जकड़ी का उद्‌भव – हरियाणा में कठोर पितृसत्ता के विरोध में पनपा है। फोचूकातडियन का कथन है, ''जहां ताकत होती है वहां प्रतिरोध होता है।'' जकड़ी महिलाओं द्वारा गाए जाने वाले गीत हैं जिनमें श्रृंगारिकता, अश्लीलता तथा विविधता पाई जाती है। अपनी दिनचर्या में स्त्री घर पर खाना बनाना, चक्की पीसना, बच्चों का लालन–पालन करना, खेत–खलिहानों में काम करना, पशु पालन इत्यादि में व्यस्त रहकर भी अपना सम्बंध ससुराल परिवार में किस प्रकार निभा रही है, अपने गीतों में प्रकट करती है। लड़की होने का अर्थ उसे अपने पिता के घर ही मालूम हो गया था। लड़की और लड़के के जन्म का अन्तर इस गीत के माध्यम से वर्णित है :–

म्हारे जन्म पै फूटे री ठीकरा, भाई के जन्म पर बाजे थाली।

दादा रोवै, दादी रोवै, रोवै म्हारी महंतारी।।

बधावै गावै, तीअल लुटाकै, लाडू भर–भर थाली।।

इतना ही नहीं, स्त्री जब अपने कार्य में पति का सहयोग लेती है तो उसकी सास को यह बिल्कुल गंवारा नहीं होता :–

बख्त उठके चक्की जोई ए चक्की दौरे आवै सै।

मेरी सास की आंख उगड़ गी ए यो के चाला हो रया सै।

के सोवै से जाए रोये घर का चाला बिगड़ रया सै।

बहु सोवे यो छोरा पीसे मोटा चाला हो रया सै।।

लड़के को जन्म न देने पर स्त्री दुःखी होकर कहती है :–

हे ईश्वर तेरी लाला रे न्यारी,

इक लाल के ऊपर छुट गी रे नगरी।

ऐसी असहनीय स्थिति में आत्महत्या के बाद स्त्री की आत्मा अपना दर्द इस प्रकार व्यक्त करती है :–

कदे देवर जेठ मान, मेरी तस–तस रोवै सास है।

क्यू रोवे मेरी सास बावली निरनावासी कद देई।।

कदे देवर जेठ मान, मेरा तस–तस रोवे भरतार है।

क्यू रोवे भरतार बावले ब्या लाईऐ थानेदार की।।

कभी–कभी अपने पति से क्षुब्ध स्त्री किसी जकड़ी में उसे बदल देने की धमकी देती हैः–

बदलूंगी राजा तोहे, किसी छैल जुल्फिये वाले से।

जकड़ी लोकगीतों में स्त्री भीतरी और बाहरी दो प्रकार के संघर्षों में सुलगती है। उसका भीतर संघर्ष अपने पति को लेकर है जो उसे विपरीत परिस्थितियों में भी निकटता का अहसास करवाये। गृहस्थ जीवन में पति के परिवार के साथ तारतम्य न होने से वह बाह्य संघर्ष से घिरी रहती है। अकेलापन, अजनबीपन, घुटन, पीड़ा और पश्चाताप इन लोकगीतों में बहुत ही कलात्मकता से व्यक्त हुए हैं। लोकगीतों की नायिका ऐसे जीवन को अपनी नियति न समझकर प्रतिकार करती है। यही प्रतिकार हरियाणा की नारी के उत्थान का पहला कदम है।

रागिनी :– रागिनी का उद्‌भव सांग के साथ ही माना जाता है परन्तु कुछ दशकों से रागिनी ने अपनी स्वतंत्र पहचान बना ली है। 1970 से पूर्व रागिनी एक शक्तिशाली विधा थी जिसका उद्देश्य समाज में घटने वाली सभी गतिविधियों को स्वस्थ जीवनशैली के अनुरूप प्रस्तुत करना था। रागिनी वास्तव में हरियाणवी संस्कृति का आइना थी।

रागिनी मंचन अनेक उद्देश्यों को लेकर किया जाता है – धार्मिक, नैतिक, सामाजिक सरोकार तथा मनोरंजन हेतु। रागिनी का मंचन सांग को गति देने के लिए भी किया जाता है। सांग के मंच प्रदर्शन हेतु मंच की साज–सज्जा पर अधिक व्यय नहीं किया जाता। गांव की चौपाल भी मंच बन सकती है जिसके चारों कोनों तथा मध्य में नृत्य के साथ संगीत चलता है। श्रोता मंच के आस–पास बैठकर रागिनी का आनन्द लेते हैं। मुख्य वक्ता खड़ा होकर गायन, नृत्य तथा सांग की कहानी को प्रस्तुत करता है। संगीतकार बैठकर वाद्यों को बजाने के साथ गायन भी करते हैं। रागिनी गायन ने जाति विशेष द्वारा गायन परम्परा को भी तोड़ा है। किसी समय गायन व वादन केवल डूम या छोटी जातियों में प्रचलित था। उदाहरणतः जाट मेहर सिंह ने भी जाति प्रपंच का विरोध किया है :–

कहे जाट तू डूम हो लिया, बाप मेरा बहकाया रे

देश नगर घेर गाम छुटग्या, कितका गाना गाया रे

जाटा का यो काम मेहर सिंह, के गावण का हो सै।

रागिनी का जन्म कब हुआ, उचित साक्ष्यों के अभाव में कुछ नहीं

कहा जा सकता परन्तु सांग के आविष्कार का श्रेय 1200 ई. के लगभग नारनौल के ब्राह्मण बिहारी लाल को दिया जाता है। जिन रागिनी गायकों ने इसे बुलन्दियों पर पहुंचाया उनमें से प्रमुख हैं – पं. लखमी चंद, बाजे भगत, गन्धर्व नन्दलाल, पं. मांगेराम, पं. रघुनाद, चन्द्रलाल भाट उर्फ वेदी, पं. रामकिशन व्यास, फौजी मेहर सिंह, चौ. मुन्शीराम, भारतभूषण सांघीवाल, पं. लहणा सिंह अत्री, डा. रणवीर दहिया तथा डॉ. चतुरभुज बंसल। रागिनी गायक/रचनाकार लोगों को समसामायिक समस्याओं से किस प्रकार सजग करते हैं – पं. लहणा सिंह अत्री की दहेज पर इस रागिनी के अंश देखिए :–

ईब जागृति आण लागरी, मतने करै विचार ईसा।
कार, स्कूटर, फ्रीज मांगता, ना चाहिए घरबार ईसा।
जडै ननद, जेठानी, सास पीटती, के फूकेगी परिवार ईसा।
तेल छिड़क खुद आग लगादे, के चाहिए था भरतार ईसा।
छल कपट सौ कोंस दूर यू लहणा सिंह देख्या, भाल्या।।

आधुनिक रागनियों का स्तर पहले जैसा नहीं रहा। अनैतिकता, अश्लीलता तथा ओछापन इन पर हावी होता जा रहा है। स्तर में गिरावट दो प्रकार से आई है – एक रागिनी के शब्द चयन में तथा दूसरा गायन व वादन में। पहले रागिनी का विषय सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक या संस्कृति से सम्बन्धित होता था। आज रागिनी भी अन्य सोशल मीडिया की तरह भ्रष्ट हो रही है। आजकल की रागनियों के टाइटल देखिए – सुहागरात, यौवन की मटकी, सोलिड बॉडी, तू चीज़ लाजवाब इत्यादि। श्री धनपत सिंह ने इस विषय पर चिंता व्यक्त करते हुए लिखा है :–

बेहुदा बड़े गाण लगे इव पास के सांग रहे ना।
ज्ञान गुणी कुछ ध्यान धरैं, इसै तत्त के सांग रहे ना।
छोटे वड्डे सुण्या करै थे, इज़्ज़त के सांग रहे ना।
किसे कहानी गाण लगे, इसे सत्त के सांग रहे ना।
धनपत सिंह यो वक्त लुगाड़ा होग्या। 8

रागिनी के गायन तथा वादन में भी कलाकारों की उचित तैयारी नहीं रहती। इस कमी को पूरा करने के लिए अशोभनीय बॉडी लैंग्वेज तथा द्विअर्थीय चुटकुलों का प्रयोग करते हैं। आज पारम्परिक लोक वाद्यों में केवल घड़ा और बीन ही दिखते हैं। इस पर सतवीर जी ने लिखा है :–

एक बखत था साज सुरील्ले, बाज्या करते म्हारे
इकतारे का तार एक अर सारंगी के सारे।
झांझ, मंजीरे, चिमटे गेल्यां, बीन के लहरे प्यारे
शंख–बांसरी, ढफ और डमरू, गुंज्या करते न्यारे।
क्युंकर भूल्यूं ढोल–नगाड़े, फागण के सरताज दिखै
तरज निकाले कम्प्यूटर इब, खुग्ये म्हारे साज दिखै।।

आजकल की रागनियों की एक और विशेषता है – ये टिकाऊ नहीं हैं। सोशल मीडिया या यू–ट्यूब पर नित नई रागनियां अपलोड होती हैं और कुछ समय बाद लोगों की जुबां से गायब हो जाती हैं।

हरियाणवी लोक संगीत लोक मंगल व लोक रंजक है जो अपनी स्थानीय रंगत से यहां के जन–जीवन को उत्कृष्ट करता है। वर्तमान में ''कल्चरल शिफ्ट'' के कारण लोक संगीत तथा लोक परम्पराओं की छवि धूमिल हो रही है। लोक संगीत का निर्माण तथा प्रचार–प्रसार भी आज बाज़ार तय करता है। ऐसे में समाज में स्थापित नैतिक मूल्यों को संजोकर रखना कठिन प्रतीत होता है। इसके लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम एक उच्च स्तरीय समिति बनाई जाए तो हरियाणा अंचल के विभिन्न स्थानों पर होने वाले सांगीतिक कार्यक्रमों का अवलोकन करे तथा ऐसे संगीत का तिरस्कार करे जिसमें नशा, अश्लीलता तथा हिंसा का प्रपंच हो। रेडियो, टी. वी., यू–ट्यूब इत्यादि पर भी इस समिति का नियंत्रण हो। दूसरा प्रान्त में स्नातक की कक्षाओं में ''हरियाणा की सांस्कृतिक धरोहर'' को एक विषय के रूप में मान्यता दी जाए। तीसरा हरियाणा प्रदेश के नामी–गिरामी कलाकारों, लेखकों तथा लोक परम्परा के वाहकों को सरकार वांछनीय अनुदान देकर उच्च स्तरीय लोक संगीत के निर्माण में सहयोग दे। इस प्रकार के सकारात्मक प्रयासों से हरियाणवी लोक संस्कृति की गरिमा बनाई रखी जा सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि :

1. डॉ. भीम सिंह – हरियाणा के लोकगीत सांस्कृतिक मूल्यांकन, आर्य बुक डिपो, करोल बाग, दिल्ली, 1981, पृष्ठ–8
2. डॉ. रीता धनकर, संजय प्रकाशन, दिल्ली।
3. Devender Kumar, Achronicle of young Haryanvi Women's Life - In

proceeding of a National Seminar in Govt. College for Women, Mahendergarh, 22-23 Oct. 2016

4. Dalbir Singh, The Stigma of Vulgarism : An Analytical Study of Haryanvi Raagini - In proceeding of a National Seminar in Govt. College for Women, Mahendergarh, 22-23 Oct. 2016.
5. m. times of India.com
6. सांग का स्वरूप, परम्परा और सांग परम्परा की देन @ संकलनकर्ता – संदीप कौशिक, लोहारी जाटू, भिवानी।
7. Chander, Dr. Subash, Haryanvi Lok, Drama, Representating Raagini, Panchkula, Aadhar Publication, Delhi, 2012.
8. सिंह, सतवीर; इक वक्खत था, रेवाड़ी – सत्यागीत प्रकाशन, 2013